भिखारी ठाकुर और गोरख पांडेय की रचनाओं का सौन्दर्यशास्त्रीय अध्ययन

संदीप राय

19वीं शताब्दी और 20वीं शताब्दी के दो प्रसिद्ध भोजपुरी[1] कवियों क्रमशः भिखारी ठाकुर और गोरख पांडेय के साहित्य के माध्यम से समाज एवं साहित्य के मध्य संबंधों का विश्लेषण करने का प्रयास किया है. ठाकुर के साहित्य में मैने उनके नाटकों एवं उनकी कविताओं को अपने अध्ययन में शामिल किया है जबकि गोरख पांडेय के साहित्य में मैंने उनकी कविताओं एवं गीतों को अपने अध्ययन के केन्द्र में रखा है. यह साहित्य प्रायः प्रभुत्व वर्ग की विचारधारा के विरुद्ध क्रांतिकारी एवं प्रतिरोध के साहित्य के रूप में देखा जाता है. मार्क्सवादी विचारधारा/सिद्धांत में प्रभुत्व वर्ग की विचारधारा टर्म आधुनिक पूंजीवादी समाजों में सामाजिक क्रम के प्रमुख घटक के रूप में सामान्यतः साझी विश्वास प्रणाली, चरम मूल्यों, एवं सामूहिक संस्कृति के सिद्धांतों के रूप में प्रयोग किया जाता है. अतः यह कहा जा सकता है कि वर्ग विभाजित समाजों में, प्रभुत्व वर्ग भौतिक उत्पादन के साथ साथ विचारों के उत्पादन को भी अपने नियत्रण में रखता है. यह सम्बद्ध विश्वासों का एक ढांचा विकसित करता है जो अपने आश्रित/ अधीनस्थ अर्थ प्रणालियों पर शासन करता है एवं जिसके परिणामस्वरूप यथास्थिति के हित में श्रमिक वर्ग की चेतना का निर्माण करता है. प्रभुत्व वर्ग जनसमूह के बीच कृत्रिम चेतना का फैलाता है जिससे वे अपने वर्ग हित की रक्षा करने में अक्षम हो जाते है. दूसरे शब्दों में कहे तो, प्रभुत्व वर्ग की विचारधारा शासक वर्ग के समाज में श्रमिक वर्ग को शामिल करने के लिए कार्य करती है. जिससे सामाजिक सामंजस्य को बनाए रखने में सहायता मिलती है. भिखारी ठाकुर और गोरख पांडेय का रचनात्मक कार्य, समाज की भौतिक संरचना एवं विद्यमान वर्ग संबंधों का आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करते हुए इस कृत्रिम चेतना का विरोध करता है.

प्रस्तुत अध्ययन में मैंने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि इन लेखकों का रचनात्मक कार्य आन्दोलन के प्रसार (रूसी क्रांति के एजिट्प्रोप और प्रोलेट्कल्ट की रणनीतियों से उधार लिया गया विचार) के बजाय प्रमुखतः अपने काव्य के सौन्दर्यात्मक गुणों के माध्यम से प्रसिद्धि पाना है. प्रोलेत्कल्ट एक तरह से पोर्टमैंटू अथवा "प्रोलेतर्स्कीया कुलतुरा"[2] रूसी 'सर्वहारा संस्कृति' का संयोजन है. यह 1917 से 1925 तक सोवियत संघ में सक्रिय आन्दोलन था जिसका उद्देश्य सर्वहारा कला को बुर्जुआ प्रभाव से पूर्णतया मुक्त कर इसके लिए नींव प्रदान करना था. इसके प्रमुख सिद्धांतकार अलेक्जेंडर बोग्दानोव (1873-1928) थे जिन्होंने प्रोलेत्कल्ट को क्रांतिकारी समाजवाद के तीसरे प्रमुख घटक के रूप में देखा. जहां संघ सर्वहारा आर्थिक हितों को देख रहा था और कम्युनिस्ट पार्टी अपने राजनीतिक हितों को वहीं प्रोलेत्कल्ट अपनी सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक हितों को देख रहा था.

दूसरी तरफ एगितप्रोप एक तरह की राजनीतिक रणनीति थी जिसमें जनता के अभिमत को प्रभावित एवं संगठित करने के लिए आन्दोलन एवं प्रचार की तकनीक इस्तेमाल की जाती थी. यद्यपि यह रणनीति दोनों स्तरों पर एक जैसी थी और सोवियत संघ में साम्यवादियों द्वारा विशेष आग्रह के साथ व्यवहार में लाई जा रही थी. यह पारिभाषिक पद बोल्शेविक रूस में प्रचलन में आया. वास्तव में, रूसी भाषा के इस "प्रोपगैंडा" पद में उस समय कोई नकारात्मक अर्थ शामिल नहीं हुआ था. इसका साधारण सा अर्थ "विचारों का प्रचार प्रसार"[3] था. एजिटप्रोप के मामले मे इसका कार्य साम्यवादी दल एवं सोवियत संघ की नीतियों की व्याख्या के साथ-साथ साम्यवाद का

[1]भोजपुरी क्षेत्र राजनीतिक सीमाओं से परे एक सांस्कृतिक ईकाई है. इस क्षेत्र में भारत के उत्तरप्रदेश राज्य का पूर्वी भाग एवं बिहार राज्य का पश्चिमी भाग शामिल है. उत्तर में यह गंगा नदी तक फैला है और नेपाल की सीमा से लगा हुआ है जो हिमालय की निम्न श्रेणियों से लेकर चम्पारन से बस्ती तक विस्तृत है. दक्षिण में यह सोन नदी से लेकर छोटानागपुर के पठारों तक फैला हुआ है जहां यह बंगाल के मनभूमि, सिंहभूमि का ओड़िया प्रदेश एवं छोटानागपुर के बिखरी हुई आदिवासी भाषाओं को स्पर्श करता है. भोजपुर क्षेत्र में कुछ अचास हजार वर्ग मील का क्षेत्र शामिल है और कुल भारतीय जनसंख्या के लगभग 15% लोग भोजपुरी बोलते है.

[2]http://en.wikipedia.org/wiki/Proletkult

[3]http://en.wikipedia.org/wiki/proletkult

प्रचार था. दूसरे सन्दर्भ में, प्रोपगैंडा का अर्थ किसी भी प्रकार के लाभकारी ज्ञान के प्रचार प्रसार से है जैसे कृषि क्षेत्र में नई तकनीक इत्यादि. आन्दोलन का अर्थ लोगों से उन कार्यों को करने के लिए आग्रह करना है जैसा कि सोवियत संघ के नेता बार-बार और विभिन्न स्तरों पर उनसे करने की अपेक्षा रखते है. दूसरे शब्दों में कहें तो प्रोपगैंडा मस्तिष्क पर कार्य करता है जबकि आन्दोलन भावनाओं पर कार्य करता है. यद्यपि दोनों सामान्यतः साथ साथ चलते हैं. इस प्रकार "प्रोपगैंडा और आन्दोलन" दो शब्दों का आविर्भाव हुआ. पद एजिटप्रोप ने एजिटप्रोप थियेटर के उदय में सहायता की जो 1920-1930 के यूरोप में विकसित साम्यवादी थियेटर था और जल्द ही अमेरिका में भी फैलने लगा यह मूलतः ब्रेख्त के नाटकों के साथ ही आरम्भ हुआ था. कलाकार और अभिनेता साधारण नाटको का गांवों के मध्य से गुजरते हुए प्रदर्शन करते थे और अपने प्रोपगैंडा का प्रचार करते थे. धीरे धीरे पारिभाषिक शब्द एजिटप्रोप को प्रत्येक तरह के वामपंथी राजनीतिक कला के रूप में व्याख्यायित किया जाने लगा.

आंदोलन और प्रचार दोनों ही रणनीतियों पर सर्वप्रथम मार्क्सवादी विचारक गोर्गी प्लेखानोव (1898) ने विस्तार से विचार किया है. उनके अनुसार प्रचार एक वैयक्तिक अथवा लघु समूह के बहुत सारे विचारों की उद्घोषणा है और आन्दोलन वृहद जनसमूह के एकमात्र विचार की उद्घोषणा है.[4] इन धारणाओं पर विस्तार से विचार करते हुए व्लादीमीर लेनिन अपने लेख "व्हाट इज टू बी डन" (1902) में स्पष्ट करते है कि प्रचारक, जिनका बुनियादी माध्यम मुद्रण (प्रिंट) है, सामाजिक असमानताओं जैसे कि बेरोजगारी अथवा भूख के कारणों को व्याख्यायित करता है जबकि एक आन्दोलनकर्ता जिसका बुनियादी माध्यम भाषण है, इन मुद्दों के भावनात्मक पक्ष का इस्तेमाल करते हुए अपने श्रोताओं को आक्रोशित और कार्रवाई करने के लिए प्रेरित करता है. आन्दोलन, जनता के कष्टों को खत्म करने के लिए प्रयुक्त किया गया एक राजनीतिक नारा और अर्धसत्य है जिससे जनमत को प्रभावित एवं संगठित किया जा सके. जबकि इसके विपरीत, प्रचार (प्रोपगैंडा) समाज के शिक्षित और तथाकथित बौद्धिक रूप से जागरुक सदस्यों को शिक्षित करने के लिए ऐतिहासिक और वैज्ञानिक बहसों का तार्किक उपयोग है.

इस अध्ययन दौरान मेरी मुख्य चिंता सामाजिक राजनीतिक साहित्य में इस निरंतर सौन्दर्यशास्त्रीय, आंदोलनकारी और प्रचारात्मक आयामों को देखना है. जिसकी चर्चा आगे की गयी है. जैक्स रैंसेरे (2005)के अनुसार, 'राजनीति स्थापित क्रम में समान मान्यता प्राप्ति के लिए एक मान्यता रहित पार्टी/दल का संघर्ष है. वे आगे कहते है कि राजनीति स्वयं में सत्ता का प्रयोग अथवा सत्ता के लिए संघर्ष नहीं है. सबसे पहले यह "राजनीतिक" रूप में दिक का संरूपण, अनुभवों के विशेष क्षेत्र का निर्माण, "सामान्य" के रूप में उठाए गए उद्देश्यों का निर्धारण और इनके कर्ताओं, जिनके पास इन उद्देश्यों को स्थापित करने की क्षमता है और इसके बारे में बहस करते हो, है. इसलिए राजनीति सर्वप्रथम अनुभवों के विशेष दायरे के अस्तित्व का विरोध/संघर्ष है. इसके अलावा, इस संघर्ष में सौन्दर्यशास्त्र भी शामिल है क्योंकि यह संघर्ष समाज का प्रतिबिम्ब होता है कि क्या कहना और क्या दिखाना अनुमतियोग्य है. किसी भी तरह के अनुभव के लिए आवश्यक तार्किक शर्तों के रूप में दिक और काल के सिद्धांत का सन्दर्भ देते हुए मैंने यहां 'एस्थेटिक्स' जैसे पारिभाषिक शब्द का इस्तेमाल "प्रॉएरी फॉर्म्स ऑफ सेंसिबिलिटी" (कांट 1900) के कांटियन विचार के अर्थ में किया है. अतः मैंने साहित्य को कला एवं सुरुचि दोनों ही रूपों और साथ ही आवश्यक रूप से दिक एवं काल के रूप में भी देखा है. यह समाज में हमारे 'स्थान(दिक)' के संरूपण के रूप में दिक और काल के साथ संवाद करता है.

यही तरीका है जिससे साहित्य के सौन्दर्यबोध में 'प्रॉपगैंडिस्ट' (प्रचारात्मक) संवेगों को समझना सम्भव है. ए.पी फॉल्क्स(1983) के अनुसार, किसी भी प्रॉपगैंडा में सांस्कृतिक, सामाजिक और एतिहासिक शर्ते होती है जिसके अन्दर यह प्रस्तुत होता है और इसकी पहचान अवलोकन करने वाले व्यक्ति के संबंधित दृष्टिकोण पर निर्भर करती है. इसी छद्मस्वरूप (विस्तार) के कारण, प्रॉपगैंडिस्ट सभी अवसरों पहचाने नहीं जा सकते है. इसका एक तरीका है जिसमें जैक्स इल्लल (1973) प्रॉपगैंडा को इसके अंतर में निहित आन्दोलनकारी उद्देश्यों को देखने के द्वारा परिभाषित करते है. उनका दावा है कि आन्दोलन का आन्दोलन का प्रोपगैंडा सामान्यतया विनाशक और और विपक्षीय

[4]Agitprop.Encyclopedia Britannica. 20089.Encyclopedia Britannica Online. 25 Sep. 2009 .http://www.britannica.com/EBchecked/topic/9224/agitprop.

होता है. यह एक स्थापित व्यवस्था को पलटने की कोशिश करता है, लेकिन साथ ही आदतों, विश्वासों और न्याय के मनोवैज्ञानिक अवरोधों को भी पहचानने के लिए प्रयुक्त किया जाता है. उसी समय में प्रॉपगैंडा का एक एकीकृत प्रभाव है जो स्थाई व्यवहार प्राप्त करने में जड़ता और समनुरुपता भी उत्पादित करता है. प्रोपगैण्डा का प्रभाव इस कारण से प्रभावहीन हो सकता है क्योंकि यह समाज के स्वाभाविक परिवर्तन के लिए प्रयास करता है, जैसे कि न केवल उनके पास समाज में परिवर्तन के लिए क्रान्तिकारी क्षमता होती है बल्कि वे यथास्थितिवाद को भी सरलता से बनाए रखते है. इस प्रकार हम प्रभुत्व वर्ग और समाज के विरोधी मूल्यों और विचारधाराओं के बीच समझौते को देख सकते है. तदनुसार, पांडेय और ठाकुर का रचनात्मक साहित्य प्रभुत्वशाली विचारधाराओं के प्रतिरोध में होने के बावजूद वे प्रचारात्मक (प्रॉपगैंडिस्ट) साहित्य के दायरे में आते हैं और अपने सौन्दर्यबोधीय आकर्षण के कारण प्रसिद्धि भी पाते हैं. इस प्रकार मैंने भोजपुरी साहित्य में क्रांतिकारी लेखन आन्दोलन को सौन्दर्यबोधीय आन्दोलन के रूप में पुनर्स्थापित किया है जिसमें स्त्रियों, मजदूरों और हाशिए के लोगों के व्यवहारों को शामिल किया है जो अपने अनुभवों को आवाज़ दे सकने में अक्षम है.

वास्तव में, साहित्य और समाज के बीच का संबंध बहुमुखी है और साहित्य के विद्वानों और समाजशास्त्रियों द्वारा समान रूप से विचार किया गया है. इस संबंध की चार बड़ी विशेषताएं पाई जाती है:1- कि साहित्य समाज को प्रतिबिम्बित करता है अर्थात समाज के प्रभुत्वशाली मानदंडों के माध्यम से इनका अनुसरण करता है अथवा उत्पन्न होता है, 2- कि साहित्य समाज को प्रभावित करता है अथवा यह समाज के प्रचलित मानदंडों का अनुसरण नहीं करता और यह विद्यमान समाज के अन्दर क्रांतिकारी साहित्य के रूप में देखा जाता है. ये अक्सर प्रतिरोधी साहित्य के रूप में जाने जाते है. प्रतिरोधी साहित्य को पराजित लोगों के बीच राजनीतिक चेतना के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में माना जाता है. 3- कि साहित्य सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखने अथवा न्यायोचित ठहराने हेतु कार्य करता है और प्रभावस्वरूप सामाजिक नियंत्रण बना रहता है. अक्सर यह प्रॉपगैंडा कला के दायरे में आता है, और 4- साहित्य इन तीनों के मध्य अपने तरीके से संवाद कायम करता है और इस प्रक्रिया में उसे प्रसिद्धि और जनाकर्षण मिलता है. अंततोगत्वा सभी चारों धारणाएं साहित्य और समाज के मध्य पारस्परिक संवाद पर जोर देती है.

ये विषय मार्क्सवादी साहित्य सिद्धांत की पृष्ठभूमि के विरुद्ध निर्धारित हैं, जो कि 1920 के दौरान के बृहद सांस्कृतिक अध्ययन के भाग रूप में खुलते है.[5] क्लासिकल मार्क्सवाद की प्रवृत्ति रही है कि वह संस्कृति को चेतना के बहुत सारे निर्मिति के रूप में देखता है जो कि यद्यपि आर्थिक उत्पादन की भौतिक प्रक्रिया और स्थिरता तथा प्रभाविता के किसी भी स्वायत्त दायरे में स्थित वंचितों, जो कि विशिष्ट रूप में उनका हो, के ऊपर निर्भरता के रूप में देखा जाता है. प्रस्तुत विश्लेषण में मार्क्सवाद के साहित्यिक सिन्द्धात को लिया गया है जिसमें समाज में संघर्ष के विषयों के ऊपर जोर दिया गया है. इस मॉडल के अनुसार साहित्य को आधार और संरचना के मध्य संबंध के परिणाम के रूप में देखा जा सकता है., इस प्रकार साहित्यिक संस्कृति के उत्पाद पूंजीवाद और बुर्जुआ विचारधाराओं के हित में कार्य करते है. इसके अतिरिक्त इन साहित्यिक उपकरणों के पूर्व टेक्स्ट (पाठ) का पाठक पैसिव (अप्रतिक्रियाशील पाठक) के रूप में व्याख्यायित किया गया था. ये उपकरण प्रॉपगैण्डा द्वारा प्रबल विचारधारा के पक्ष में जनमत को प्रभावित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता देखा गया है.

तथापि बीते दशक में साहित्य के समाजशास्त्र में किए गए कार्य से एक बहुत महत्वपूर्ण दिशा मिली है जिसमें पाठक को लेखक की रचना का अप्रतिक्रियाशील (पैसिव) पाठक/रिसीवर (प्राप्तकर्ता) होने के बजाए रचनात्मक एजेंट के रूप में पुनः परिभाषित किया गया है. समाजशास्त्रियों ने यूरोपीय "रिसेप्शन एस्थेटिक्स"[6]

[5]साहित्यिक सिद्धांत के अन्य बहुत सारे प्रसिद्ध स्कूल है जिसमें ये विभिन्न विषय पहले से अस्तित्व में थे यथा सांस्कृतिक अध्ययन (जो प्रतिदिन जीवन में साहित्य की भूमिका पर जोर देता है) रूपवाद(फॉर्मलिज़्म) (जो पाठ के भीतर विद्यमान विशेषताओं का विश्लेषण, उनकी व्याख्या एवं उनका मूल्यांकन करता है. यह साहित्य में विषयवस्तु की अपेक्षा रूप या फॉर्म के बारे में पड़ताल करता है.) उत्तर उपनिवेशवाद (जो साहित्य में उपनिवेश वाद के प्रभावों पर बल देता है.) संरचनावाद और उत्तर संरचनावाद (जो भाषा विज्ञान के माध्यम से संस्कृति में तर्कसंगतता की व्याख्या एवं उसकी आलोचना करता है, जेंडर स्टडीज़ (जो लिंग आधारित संबंधों के विषयों पर जोर देता है) और इसी तरह अन्य कई अनुशासन.

[6]रिसेप्शन सिद्धांत पाठक प्रतिक्रिया साहित्य सिद्धांत का एक संस्करण है जो एक साहित्यिक टेक्स्ट (पाठ) पर पाठक के अभिग्रहण (रिसेप्शन) पर जोर देता है (जिसे श्रोता अभिग्रहण भी कहा जाता है). साहित्य में, यह मत 1960 में हैंस जॉस के साहित्य लेखन के माध्यम से अस्तित्व में आया. अभिग्रहण (रिसेप्शन) सिद्धांत

(अभिग्रहण सौन्दर्यशास्त्र) को साहित्यिक अर्थों के निर्मिति को समझने हेतु प्रयुक्त किया है. रिसेप्शन एस्थेटिक्स के प्रस्तावकों का तर्क है कि पाठक कभी भी टेक्स्ट (पाठ) के पास खाली स्लेट की तरह नहीं आता. विभिन्न समूहों अथवा वर्गों के पाठक का किसी एक 'पाठ' के बारे में उनके भिन्न-भिन्न विचारों/विवेक एवं अपेक्षाओं पर समाज विज्ञानियों ने गहन विचार किया है. लेखक "हर टेक्स्ट (पाठ) का एक 'अंतर्निहित पाठक' होने की प्रक्रिया को कम करने की कोशिश करता है (आइसेर -1974) लेकिन वह इसे नियंत्रित नहीं कर पाता.

रिसेप्शन एस्थेटिक्स साहित्य के समाजशास्त्र में शोध के एजेंडों को बदलने में सफल हुआ है लेकिन कई हिस्सों में क्योंकि प्रचलित संस्कृति के विद्यार्थियों के मध्य अपना स्थान बनाते हुए यह अन्य सैद्धांतिक उन्नतियों के साथ संवाद करता है जिनमें से लोगों को खुद ही सार्थक अर्थ सृजन की योग्यता प्रदान करता है. जहां एक तरफ जनसंस्कृति के सिद्धान्तकारों एवं वर्चस्वशाली तर्कों ने जन-उत्पादित सांस्कृतिक उत्पादों के प्रापकों को वैचारिक संकल्पना में ढाला वहीं इसके विपरीत निराश्रित आवाजों, जो लोग ब्राइकोल्यूर्स[7] से काफी साम्यता रखते थे, ने इसका विरोध किया और जो भी चींजे उनके पास उपलब्ध ठीक उसी का अर्थपूर्ण उपयोग करने लगे. इसके अतिरिक्त इन अर्थों ने सांस्कृतिक प्रत्ययों के विषय के रूप में प्रस्तुत शक्ति संबंधों को अधिकांशतः उलट दिया.

यह दृष्टिकोण राजनीतिक रूप से मजबूत है क्योंकि इसने अपने पूर्ववर्ती उपेक्षित लेखन शैलियों जैसे क्षेत्रीय साहित्य, कविताएं और पाठों (टेक्स्ट) का सम्मान किया. तथापि ये मेहनतकश जनता की मुखरता के प्रतीक रूप में पुनः व्याख्यायित किए गए और सामाजिक विशेषाधिकारों तथा सांस्कृतिक पूंजी से हीन समूहों द्वारा इसका उपयोग किया गया. इन शैलियों में एक निश्चित प्रकार का प्रतिरोध का स्वर पाया जाता है. निश्चय ही, इसके पश्चात भिखारी ठाकुर और गोरख पांडेय के साहित्यालेखन को प्रोलेत्कल्ट और एजिटप्रॉप रणनीतियों के सन्दर्भ में समझना संभव होगा.

उपर्युक्त अभिकथन पर विचार करने के साथ इस लेख में साहित्य को केवल वर्चस्वशाली बुर्जुआ विचारधारा के एक उपकरण के रूप में न समझकर इससे अधिक के रूप में विचार किया गया है. निश्चय ही, यह उन प्रक्रियाओं की पहचान करता है जो निम्नलिखित तरीकों से सामाजिक राजनीतिक साहित्य को देखे जाने के लिए समर्थ बनाता है-

1. मार्क्सवादी साहित्य सिद्धांत द्वारा दिए गए तर्कों के विरोधस्वरूप, साहित्य को वर्चस्वशाली बुर्जुआ विचारधाराओं से हटते हुए देखना सम्भव है. इस तरह पाठ, कविताएं और लेखन के अन्य शैलियों को वर्चस्वशाली वर्ग द्वारा फैलाए जाने वाले छद्म चेतना के प्रतिरोध के रूप में देखा जा सकता है.

2. इसके अतिरिक्त, साहित्य को सौन्दर्यशास्त्र के एक उद्यम के रूप में देखना सम्भव है, जिससे अपने मनोरंजन एवं आनन्द के मूल्यों के मायने में शुद्ध रूप से इसका विश्लेषण किया जा सके एवं अनुभव किया जा सके. तथापि, सौन्दर्यशास्त्रीय मानदंड जिसके ऊपर ऐसे फैसले निर्भर है वे हमेशा स्पष्ट रूप से स्थापित नहीं होते है.

3. लिखित साहित्य जिसे प्रायः प्रतिरोध का सहित्य समझा जाता है और समाज तथा लोगों मानसिकता में बदलाव लाने की क्षमता से युक्त होता है, को प्रॉपगैंडावादी साहित्यिक कला के रूप में देखा जाता है. हमने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि क्रांतिकारी लेखन, बदलाव की प्रक्रिया को प्रतिबिम्बित करने अथवा वर्चस्वशाली मूल्यों को चुनौती देने के बजाय, मुद्दों को प्रोपगैंडात्मक बनाने में समाप्त होता है.

पश्चिमी यूरोप के कुछ उल्लेखनीय कार्यों के बीच जर्मनी और संयुक्त राष्ट्र अमेरिका (फ्रंटियर 132) में 1970 एवं 1980 के शुरुआती दौर के दौरान में सबसे ज्यादा प्रभावी था.

[7]पारिभाषिक शब्द ब्राइकोलॉज अनेक अनुशासनों में प्रयुक्त किया जाता है जिसमें उनके बीच दृश्यकला (विजुअल आर्ट्स) और साहित्य में इस प्रक्रिया द्वारा विभिन्न प्रकार की चीजों से किसी एक निर्माण अथवा निर्मिति का संदर्भ देते हुए अथवा 2 तरह के कार्यों की निर्माण किया जाता है. यह पारिभाषिक शब्द फ्रांसीसी शब्द ब्रिकोलॉज से लिया गया है. जिसका फ्रांसीसी भाषा में मूल अर्थ है कि, "पास में उपलब्ध पदार्थों का सर्जनात्मक एवं साधनसम्पन्न/ उपायकुशल उपयोग किया जाना"; समकालीन फ्रांसीसी भाषा में इस शब्द का अर्थ अंग्रेजी के 'स्वयं करों' के अर्थ से साम्य रखता है. कोई व्यक्ति जो ब्रिकोलॉज में संलग्न रहता है, वह ब्रिकोल्यूर है.

इससे अधिक, यह प्रोपगैंडा कला के उन सौन्दर्यशास्त्रीय मूल्यों पर निर्भर होता है जिसकी आलोचना प्रायः मार्क्सवादी लेखकों द्वारा की जाती है.

4. अंततः साहित्य आवश्यक रूप से इस तरह से उन विचारों को प्रतिबिम्बित करता है जिसमें समाज व्यवस्थित है. यहाँ लेखकों के सामाजिक प्रभाव को प्रतिबिम्बित करता है और जिससे उनके साहित्यिक उत्पाद अपने स्रोताओं तक अपनी पहुंच जाएं. यह हमें बताता है कि सामाजिक ऐतिहासिक सन्दर्भ (ऐतिहासिक काल, अर्थव्यवस्था और राजनीतिक बनावट, सामाजिक स्तरविन्यास और सांस्कृतिक अवस्थिति) लेखक के रचनात्मक कार्य की शैली और विषयवस्तु को किस प्रकार से प्रभावित करता है.

इस प्रकार मैंने विशेषतः ठाकुर एवं पांडेय के रचनात्मक लेखन में भोजपुरी साहित्य का यह मामला उठाया है. हम इसमें यह देखने का प्रयास करेंगे कि दोनों लेखकों के रचनात्मक कार्य में प्रतिरोध, सौन्दर्यशास्त्रीय पक्ष, प्रोपगैंडा एवं सामाजिक संरचना के विषय कैसे प्रभावित होते हैं. वास्तव में, उनके रचनात्मक कार्य में एजिटप्रोप और प्रोलेत्कट दोनों ही रणनीतियां शामिल है. ठाकुर जो विगत शताब्दी में बिहार और उत्तर प्रदेश के भोजपुरी बोली क्षेत्र में लोक गायक के रूप में व्यापक रूप से प्रसिद्ध है, ने देशभक्ति से लेकर सामाजिक मुद्दों तक के विषयों पर लिखा है. उन्होंने ब्रिटिश राज के दौरान लोगों के बीच उपनिवेश विरोधी भावनाओं को जगाने का भी प्रयास किया था. अपने नाटक अर्थात "बिदेशिया" (द माइग्रैंट-प्रवासी) के लिए प्रसिद्ध भिखारी ठाकुर का जीवन और रचनात्मक लेखन इस समुदाय के प्रतिदिन के सांस्कृतिक जीवन को जानने के लिए एक प्रवेशद्वार है. बिदेशिया थिएटर को देखने के लिए एक बड़ा दर्शक समूह आता था विशेष रूप से तब जब स्वयं भिखारी ठाकुर और उनकी नाटक मंडली नाटक खेलती थी. नाटकों की प्रसिद्धि उनके सामान्य घटनाओं के वर्णन एवं प्रवासियों की पीड़ा से सम्बंधित अनुभवों के कारण थी, यह ऐसा विषय था जो भोजपुरी दर्शकों के दिलों को छू लेता था. मनोरंजन का अंतःप्रकीर्णन तथा विद्यमान व्यवस्था पर व्यंग्य ने भी बिदेशिया थिएटर को लोक कला एवं संस्कृति के एक अत्यंत प्रसिद्ध फॉर्म के रूप स्थापित किया. ये नाटक विद्यमान सामाजिक विभाजनों एवं भोजपुरी प्रवासियों के विस्थापन की प्रक्रिया पर एक टिप्पणी भी है.

भिखारी ठाकुर के रचनात्मक लेखन का विश्लेषण यहाँ दिखाता है कि उनके नाटकों ने जनसंख्या के एक निश्चित वर्ग विशेष रूप से विशेषाधिकारहीन वर्ग में ही प्रसिद्धि प्राप्त की. यह केवल भिखारी ठाकुर द्वारा पिछड़े वर्ग का शोषण करने वाली ऐसी संस्थाओं के विरुद्ध एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाने के कारण नहीं हुआ बल्कि समाज के इन मानदंडों के बीच कम या अधिक रूप में वे स्वयं उपस्थित थे जो इस दमन और शोषण की प्रक्रिया को चलाते थे. यह महिलाओं के बारें में किए गए ठाकुर के रचनात्मक लेखन में गहरे रूप में देखा जा सकता है. एक तरफ उन्होने अपने नाटकों की क्रांतिकारी अभिनेत्रियों को लैंगिक अधिकारों के उनके अभिकथन के द्वारा देखा और दूसरी तरफ पवित्रता और कर्तव्य के मानदंडों को मानने के लिए बाध्य भी किया है.

अब जबकि ठाकुर का रचनात्मक कार्य समाज का विस्तृत चित्र वर्णित किया है वहीं पांडेय का रचनात्मक कार्य प्रभुत्व की संरचना के विनाश को और ज्यादा सशक्त, निरंतर तरीके से प्रस्तुत करते देखा जा सकता है. सन 1989 में दिल्ली के जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय में अपना जीवन स्वयं खत्म करने वाले कवि पांडेय के विभिन्न साम्यवादी धारा का प्रकाशन है जो शोषण एवं प्रतिरोध के मुद्दों पर आधारित है. पांडेय का रचनात्मक कार्य दलित एवं स्त्रीमुक्ति आन्दोलनों के सन्दर्भ में विशेष रूप से प्रसिद्ध हुआ क्योंकि यह अपने श्रोताओं को पुरानी व्यवस्था से उखाड़कर नई व्यवस्था से बदलने के लिए उत्प्रेरित करता है. आज के समय में पांडेय की रचनात्मक कार्यों की लोकप्रियता को विभिन्न बैंड्स जैसे कि इंडियन

ओसीयन एवं फिल्मों यथा हज़ारों ख्वाहिशें के गानों में देखी जा सकती है. ये गाने अपने साधारण लेकिन प्रभावी धुनों के कारण सौन्दर्यशास्त्रीय आकर्षण रखते है जो वर्चस्वशाली बुर्जुआ विचारों की आलोचना करते है.

पांडेय और ठाकुर दोनों के रचनात्मक कार्यों का यह विश्लेषण एक रास्ता निकालता है जिसमें परिवर्तन और प्रतिरोध के विचारों को प्रोत्साहित करने के बजाय साहित्य सौन्दर्यशास्त्र और प्रोपगैंडा के दायरे में रह सकता है. वास्तव में, प्रतिरोध का विषय स्वयं ही सौन्दर्यशास्त्रीय और प्रोपगैंडावादी उद्यम बनाया जाता है. थोर्स्टीन वेबलेन (1998) के अनुसार, सुन्दरता की अवधारणा स्थिति, पक्षपातपूर्ण श्रेष्ठत्व और आर्थिक मूल्यों के विचारों द्वारा प्रभावित होता है. तथापि, यदि हम सौन्दर्यशास्त्र को अनुभवों के संवेदी अथवा इन्द्रियगत पक्षों के बीच के अनिवार्य संबंधों के रूप में समझ जाते है तो आनन्द और साहित्य के मध्य के संबंध के बारे में रोनाल्ड बार्थ्स (1975) का कहना है कि टेक्स्ट (पाठ) के सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभव का इसके विचारधारात्मक और ऐतिहासिक सन्दर्भ से कोई संबंध नहीं है. उनके लिए सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभव मूल है और अन्य चीजें ((सौन्दर्यशास्त्रीय गुणधर्म, राजनीतिक चेतना, विचारधारा, छद्म चेतना) सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभवों हेतु उनकी वरीयता क्रमानुसार द्वितीयक है. इसप्रकार यह कहना समीचीन है कि सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभवों को बिना किसी पूर्वधारणाओं, पूर्वाग्रहों, अथवा आधार अथवा अधिरचना की सीमाबन्धनों के महसूस करना चाहिए. और वास्तविकता में, सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभवों का अधिकांश भाग विशेष रूप से, उनके विषयवस्तु के अर्थ में, सामान्य अथवा साधारण ऐन्द्रिक तत्वों पर केन्द्रित नहीं होता है. सौन्दर्यशास्त्रीय अनुभवों में अनुभव सर्व प्रथम है और यही तरीका है जिसे हम ठाकुर एवं पांडेय के रचनात्मक कार्य से इसकी खोज कर सकते है.

इससे अधिक, इसमें प्रयुक्त की गई विधि को भी देखना सम्भव होगा जिसमें इन लेखकों का रचनात्मक लेखन साहित्य के एक विशेष दायरे में आता है जो प्रोपगैंडा व्यवहारों से ओतप्रोत होता है. कला का यह संबंध, विशेष रूप से, प्रोपगैंडा के लिए साहित्य का उपयोग इस अध्ययन में दिखाया गया है बजाय इसके कि सिर्फ रचनात्मक लेखन है क्योंकि पांडेय और ठाकुर का रचनात्मक लेखन प्रायः क्रांतिकारी, प्रतिरोधी और मानसिकता में परिवर्तन और उसके द्वारा समाजों में परिवर्तन लाने की क्षमता से युक्त समझा जाता है. यह क्रांतिकारी लेखन वर्चस्वाशाली मूल्यों को चुनौती देने अथवा परिवर्तन की प्रक्रिया को दर्शाने के बजाय मुद्दों को प्रोपगैंडावादी बनाने में खत्म होता है. इससे अधिक, ये लेखन न केवल प्रोपगैंडावादी साहित्य के दायरे में आते हैं बल्कि बुनियादी रूप से प्रसिद्धि प्राप्त करते है क्योंकि उनमें सौन्दर्यशास्त्रीय अपील होती है.

संपर्क : संदीप राय, समाजशास्त्र विभाग, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय गोरखपुर